शिक्षकों की कलम से

विगत अंक से हमने एक नया कॉलम शुरू किया है जिसके माध्यम से शिक्षक एवं शिक्षक प्रशिक्षक अपने अनुभवों को साझा कर सकें। इस बार तीन अनुभव प्रस्तुत हैं। इन पर अपनी राय दीजिए। साथ ही, आपसे एक छोटी-सी अपेक्षा होगी कि आप अपने अनुभवों को भी हमारे पास ज़रूर भेजिए।

1. सर! आपने तो अपना परिचय!!!..... केवलानन्द काण्डपाल
2. बोलचाल की भाषा और मुहावरे..... अनिल सिंह
3. भोजन की थाली से..... मोहम्मद उमर

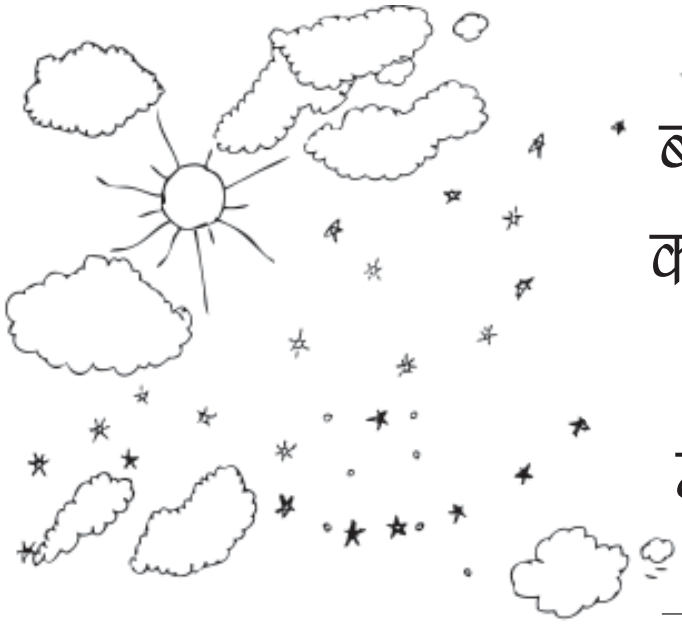

बोलचाल की भाषा और मुहावरे

अनिल सिंह

अब यह एक प्रगतिशील विचार है कि मौखिक भाषा की मज़बूती और विस्तार, लिखने और पढ़ने के कौशल पर प्रत्यक्ष एवं सकारात्मक असर डालते हैं।

ज़्यादातर स्कूलों में बोलने या बातचीत को आम तौर पर भाषा के एक संसाधन के रूप में नहीं देखा जाता। किसी कक्षा गतिविधि के सन्दर्भ में सबसे मुखातिब होकर बोलने के मौके बच्चों के पास बहुत ही कम और सीमित अर्थों में ही हैं। जैसे कि, किसी प्रश्न का उत्तर देने के लिए निर्धारित और नपे-तुले शब्दों में बोलना, स्कूल नहीं आ पाने, कॉपी-किताब नहीं ला पाने या गृहकार्य पूरा नहीं कर पाने के कारण बताते समय भय और शर्मिन्दगी का भाव लिए हुए बोलना या फिर पाठ्यपुस्तक का वाचन करते हुए अक्षरशः बोलना।

मौखिक भाषा यहीं से कुण्ठा और किताबी ढाँचे का शिकार होती चली जाती है। इन पाबन्दियों के चलते उसका संसार विस्तृत नहीं हो पाता। पढ़ने और लिखने का कौशल सीखने में स्कूल के भीतर इस मौखिक भाषा से कोई मदद नहीं मिल पाती। लिखने-पढ़ने का काम एक अलग ही टापू बन जाता है जिसका बोलचाल की नदी से कोई जुड़ाव ही नहीं।

हमने मौखिक भाषा के लिए अलग-अलग स्तरों पर कई सारे प्रयास किए हैं। इन प्रयासों में किस्से-कहानियाँ गढ़ना, उनका वाचन, पिछले दिन के

अनुभव साझा करना जैसी कुछ अनौ-पचारिक गतिविधियाँ आदि। इसी सन्दर्भ में बड़े बच्चों (6 से 10 साल) के समूह के साथ मुहावरों पर किए गए सत्र को साझा किया जा रहा है।

उस दिन बच्चों को यह तो पता था कि आज मुहावरों पर चर्चा होनी है पर बच्चे यह नहीं सोच पा रहे थे कि कक्षा में आखिर होगा क्या। लिखाया जाएगा या पढ़ाया जाएगा या फिर कुछ सुनाया जाएगा।

कक्षा इस बात से शुरू हुई कि आज हम मुहावरों के बारे में बातचीत करेंगे और कुछ मुहावरे सीखेंगे। उन्हें बताया कि जब किसी घटना को पूरा बखान न करके थोड़े से शब्दों में एक कैप्सूल की तरह बोला जाए तो यह कितना मज़ेदार हो सकता है। और कैप्सूल पहले से ही तैयार हों। सिर्फ छाँटना है कि कौन-सा कैप्सूल यहाँ पर फिट बैठेगा। ये कैप्सूल ही मुहावरा है। इतना समझना था कि बच्चों के बीच हँसी के फव्वारे और खुसर-फुसर फैल गई।

ऊँट के मुँह में जीरा

मैंने उदाहरण के रूप में पहला मुहावरा लिया 'ऊँट के मुँह में जीरा'। मैंने पूछा, "ऊँट सबने देखा है?" सब अपने-अपने अनुभव बताने लगे। चित्र से लेकर फिल्म और ऊँट की सवारी तक के अनुभव सामने आए। इसके बाद पूछा, "और जीरा?" सबने उस पर भी कोई देर न की।

अब मैंने ब्लैक-बोर्ड पर एक बड़ा-सा पूरा ऊँट बनाया। मैंने कहा, "इतना बड़ा तो होगा?" इस पर बच्चों ने

कहा, "इससे भी बड़ा होता है।" मैंने कहा, "ठीक है, अपने पास इतना ही बड़ा बोर्ड है इसलिए इतना ही बड़ा ऊँट चलेगा।"

इसके बाद अब जीरे की बारी थी। मैंने बोर्ड पर चॉक से एक बिन्दु बनाया और पूछा, "जीरा इतना बड़ा होगा?" उन्होंने कहा, "और छोटा।" मैंने कहा, "ठीक है, पर इससे छोटा दिखेगा नहीं। फिलहाल अपन इसे ही जीरा मानकर चलते हैं।" मैंने कहा, "अब फिर से एक बार 'ऊँट के मुँह में जीरा' मुहावरे पर नज़र डालो।" मैंने जानबूझकर ऊँट का मुँह बड़ा ही बनाया था। मैंने कहा, "इसमें दो चीज़ें हैं, ऊँट का मुँह और जीरा।" उनसे पूछा कि ऊँट क्या-क्या खाता है। सबने ढेर सारी चीज़ें गिनाईं। अब मैंने एक किस्सा सुनाया, "एक बार एक ऊँट को बहुत ज़ोरों की भूख लगी थी। रेगिस्तान में दूर-दूर तक कहीं भी कोई पेड़, पत्ती या घास न दिखती थी। ऊँट भूख से बेहाल था। उसके माालिक की थैली में भी कुछ न था। फिर भी उसने एक बार अपनी थैली खँगाली। उसमें जीरे का एक दाना कोने में चिपका हुआ मिल गया। उसने वह जीरा ऊँट को खाने के लिए दिया। ऊँट ने मुँह खोला और माालिक ने जीरा उसके मुँह के अन्दर रख दिया। ऊँट अपनी जीभ से जीरे को टटोलता ही रह गया।"

बच्चों ने कहा, "फिर तो वह भूखा ही रह गया होगा।" "जीरे का दाना तो उसके दाँतों के बीच ही फँस कर रह गया होगा।" किसी ने कहा, "गाल में चिपक गया होगा।" कोई बोला, "जीभ के नीचे ही छुप गया होगा।"

मुझे लगा, बात जम गई है। ऊँट और जीरे का अनुपात समझ पाने के लिए यह पर्याप्त था। ऊँट की ज़रूरत और उपलब्ध सामग्री के बीच सम्बन्ध भी उन्हें समझ आ गया।

मैंने परिभाषा गढ़ी कि जब ज़्यादा की ज़रूरत हो और उसकी तुलना में बहुत थोड़ा या नाममात्र को मिले तो ऐसी स्थिति में कहते हैं ये तो 'ऊँट के मुँह में जीरे' वाली बात हुई।

बच्चों को तो मज़ा ही आ गया। उन्हें परिस्थिति और उसका कैप्सूली-करण समझ आ गया था। मैंने कहा, "अब सब एक किस्सा सुनाएँ जिसमें ऊँट के मुँह में जीरा जैसी बात हो।" दो बच्चों ने तो हूबहू यही किस्सा दोहरा दिया। तीन बच्चों ने ऊँट की जगह हाथी और घोड़ा रखे। दो बच्चों ने उसे अपने साथ जोड़ा और खुद के सामने भूख में एक टॉफी या बेर खाने की स्थिति बताई।

अगले चरण में यह तय हुआ कि अब सब अपनी-अपनी परिस्थिति को अभिनय द्वारा प्रस्तुत करें। यह तो और भी मज़ेदार रहा। मैंने कहा, "आज के लिए इतना काफी है। कल हम दो नए मुहावरे लेंगे और उन पर किस्से बनाएँगे और फिर उन्हें अभिनय द्वारा प्रस्तुत करेंगे।"

अब तो मुहावरे की कक्षा हिट हो

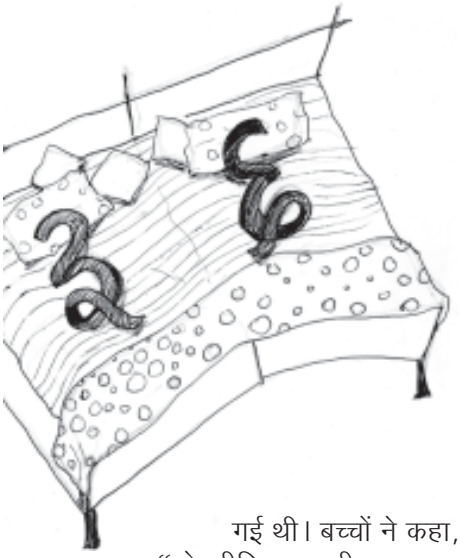

गई थी। बच्चों ने कहा, "दो पीरियड इसी पर बात करेंगे।" ऐसा ही हुआ। इस बार हमने दो नए मुहावरे, 'छत्तीस का आँकड़ा' और 'आ बैल मुझे मार' लिए।

छत्तीस का आँकड़ा

सबसे पहले मैंने बोर्ड पर ३६ लिखा। मैंने पूछा, "यह क्या है?" सब बोले, "थर्टी सिक्स - छत्तीस।" मैंने कहा, "अगर ये दो इन्सान हों तो? तुम्हें क्या दिखता है?" किसी ने कहा, "ये अलग-अलग करवट लेकर सो रहे हैं।" मैंने कहा, "अगर ये खड़े हों तो?" एक ने कहा, "ये अलग-अलग चीज़ों को देख रहे हैं।" दूसरे ने कहा, "अलग-अलग तरफ मुँह किए हुए हैं।" मैंने कहा, "अगर ये एक-दूसरे से नाराज़ हों तो?" तब एक ने कहा, "ये एक-दूसरे का चेहरा नहीं देखना चाहते। आपस में बात नहीं करना चाहते। पीठ लड़ाकर खड़े हैं," वगैरह वगैरह।

मैंने किस्सा सुनाया, "एक बार कक्षा में एक दोस्त से मेरा झगड़ा हो गया। उसकी कुछ आदतें मुझे बिलकुल पसन्द नहीं थीं। वह बहुत शरारत करता था, मैं चुपचाप बैठता था फिर भी मेरे नाम से शिकायत होती थी। वह आधी छुट्टी में बाहर सड़क पर घूमता था, मैं अपनी कॉपी लिखता था। वह दूसरे साथियों से मेरी बुराई करता और मेरी खिल्ली भी उड़ाता। बाद में हम लोग अलग-अलग बैठने लगे। जब हमें साथ बुलाया जाता तो हम एक-दूसरे की तरफ पीठ करके खड़े हो जाते। टीचर ने कहा, पहले तो इनमें याराना था अब '३६ का आँकड़ा' है।"

एक बच्ची उठी और उसने दो कुर्सियों को उठाकर एक-दूसरे की विपरीत दिशा में इस प्रकार सटा कर रखा मानो वे एक-दूसरे से बात नहीं करना चाहती हैं। उनकी पीठ एक-दूसरे की तरफ और मुँह अलग-अलग दिशाओं में।

बच्चों को समझते देर न लगी कि '३६ के आँकड़े' में भी स्थिति बिलकुल यही है। ये दो इन्सान हैं। इनके बीच अनबन है। इनकी आपस में नहीं पटती। ये एक-दूसरे से बिलकुल विपरीत हैं। मतलब '३६ का आँकड़ा'। अगले ही पल दो बच्चियाँ उन कुर्सियों पर जा बैठीं। सब चिल्लाने लगे 'छत्तीस का आँकड़ा', 'छत्तीस का आँकड़ा'।

अब सबको अपने-अपने किस्से बनाने थे। सबने परिस्थितियाँ गढ़ीं और उन्हें प्रस्तुत किया।

आ बैल मुझे मार

अब बारी थी 'आ बैल मुझे मार' की। मैंने फिर एक किस्सा सुनाया। मैंने कहा – एक व्यक्ति चला जा रहा था और एक बैल चुपचाप घास चर रहा था। उसने देखा एक दूसरा व्यक्ति बैल को परेशान कर रहा है और बार-बार उसके सींगों से खिलवाड़ कर रहा है। पहले वाले व्यक्ति ने उसे मना भी किया कि अरे वो बैल है, सींग मार देगा। पर दूसरा व्यक्ति न माना। वह वैसा ही करता रहा। आखिरकार, खीझकर बैल ने उसे सींग मार ही दीं। व्यक्ति गिर पड़ा और उसे काफी चोट आई। इस पर पहले व्यक्ति ने कहा यह तो वही बात हुई कि 'आ बैल मुझे मार।' ज़ख्मी व्यक्ति को उठाते हुए उसने कहा, "तुमने ही बैल को मारने के लिए बुलाया, अब भुगतो।"

"और कुछ इस तरह बना मुहावरा 'आ बैल मुझे मार'।" मैंने कहा, "सभी इस पर एक-एक किस्सा बनाएँ और सुनाएँ।" इसके बाद दो समूह बना दिए गए और काम यही कि दोनों समूह इस मुहावरे को अलग-अलग तरह से अभिनय द्वारा प्रस्तुत करें।

बच्चों को इस गतिविधि में बहुत मज़ा आया। एक समूह ने तो बैल ही रखा पर दूसरे समूह ने बैल की जगह एक गुस्सैल पहलवान को लिया। इसके बाद तो **'दिन में तारे नज़र आना', 'हवाई किले बनाना', 'करेला वो भी नीम चढ़ा', 'एक पंथ दो काज', 'तिल का ताड़ बनाना', 'हाथ पर हाथ धरे बैठना'** जैसे मुहावरों में बच्चों ने कमाल की कल्पनाशीलता और रचनात्मकता दिखाई। किस्सा सुनाते ही उन्हें मुहावरे की परिस्थिति समझते देर न लगती और झट से वे इसके लिए एक दूसरा उपयुक्त किस्सा रच देते और फिर समूह में अभिनय द्वारा प्रस्तुत भी कर देते।

'हवाई किले बनाना' में शेखचिल्ली का किस्सा उन्हें बहुत मज़ेदार लगा। समूह में जब उन्होंने अपने किस्से गढ़े और अभिनय द्वारा उन्हें प्रस्तुत किया तो वह देखने लायक था। सटीक परिकल्पना, असरदार संवाद और समन्वय का ज़बरदस्त उदाहरण रहीं उनकी ये प्रस्तुतियाँ।

मुहावरों के इन सत्रों के बाद तो 'तिल का ताड़ बनाना', 'एक पंथ

दो काज' और 'हवाई किले बनाना' के प्रयोग बच्चों की बातों में कई रोज़ तक सहज ही सुनाई देते रहे। जब एक छोटी बच्ची को दरवाज़े की मामूली खरोंच लगी और सब ने उसे घेर लिया, मरहम पट्टी का डिब्बा ले आए, किसी ने आकर टीचर को बताया कि बहुत चोट लगी है, तो इस पर बड़ी उम्र समूह के एक बच्चे ने कहा, "फालतू में ये लोग तिल का ताड़ बना रहे हैं सर, कोई चोट-वोट नहीं लगी है।"

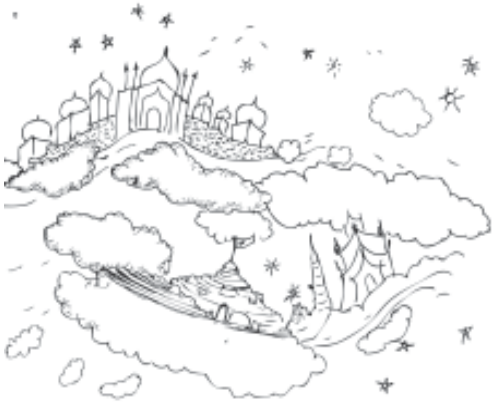

मुहावरे, बोल-चाल की भाषा में खिलन्दड़पन का एक उपकरण हैं। ये न सिर्फ भाषा में चुटीलेपन व सारगर्भिता को बढ़ाते हैं बल्कि अपयोग करने वाले की तर्कशक्ति, वाकपटुता और सूझबूझ को भी राह देते हैं। बच्चों के साथ मुहावरे की गतिविधियों के बड़े ही दिलचस्प अनुभव रहे। कक्षा में बच्चों की सहज भागीदारी यह दर्शाती है कि मुहावरे के प्रयोग को बच्चे आत्मसात कर पा रहे थे। और यही तो बोलचाल की भाषा की सहजता का फायदा है।

अनिल सिंहः वंचित तबके के बच्चों के साथ काम करने वाली संस्था 'मुस्कान' के साथ लम्बे समय तक काम किया है। वर्तमान में आनन्द निकेतन डेमोक्रेटिक स्कूल, भोपाल से जुड़े हैं। कहानी प्रस्तुति में विशेष रुचि।

सभी चित्रः शिवांगीः अम्बेडकर युनिवर्सिटी, दिल्ली से विज़्युअल आर्ट्स में स्नातकोत्तर। लोक कथाओं की चित्रकारी पर शोध कर रही हैं। स्वतंत्र रूप से चित्रकारी करती हैं। दिल्ली में निवास।